अब ड्राइंग रूम की बजाय सड़क की राजनीति करनी होगी

योगेन्द्र यादव

गुजरात, हिमाचल और दिल्ली में हुए चुनावों के परिणाम से दो भ्रामक निष्कर्ष निकाले जा रहे हैं। एक तरफ तो गुजरात में भाजपा की बड़ी जीत को ऐसे पेश किया जा रहा है मानो मोदी अजेय हों, मानो यह परिणाम उनके 2024 के राष्ट्रव्यापी विजय अभियान का शंखनाद हो। दूसरी तरफ हिमाचल और दिल्ली के परिणाम को इस तरह पेश किया जा रहा है मानो इनसे गुजरात की भरपाई हो जाएगी, मानो भाजपा को हराना हंसी खेल का मामला है।

दोनों निष्कर्ष सच से परे हैं। दोनों निष्कर्ष हमें वक्त की चुनौती से विमुख करते हैं। 'कुछ नहीं हो सकता' या फिर 'कुछ खास करने की जरूरत नहीं है' की मनस्थिति में धकेलते हैं। जिन्हें देश के भविष्य की चिंता है वो इन जनादेशों में भविष्य के सबक ढूंढेंगे। अगर गुजरात में भाजपा की जीत 2024 की

चुनौती को रेखांकित करती है तो हिमाचल और दिल्ली में उसकी हार बदलाव की संभावना की ओर इशारा करती है।

गुजरात में भाजपा की जीत कोई सामान्य जीत नहीं है। भाजपा का 156 सीट का रिकॉर्ड सिर्फ विपक्ष के वोट बंटने का परिणाम नहीं था। बेशक आम आदमी पार्टी द्वारा 12 प्रतिशत वोट झटक लेने से कांग्रेस को सीटों का भारी नुक्सान हुआ, खासतौर पर सौराष्ट्र और दक्षिण गुजरात के आदिवासी अंचल में। लेकिन इस हकीकत से आंख नहीं मूंदी जा सकती कि औसत सरकार, जनता के असंतोष, अनजाने नेतृत्व और मोरबी हादसे के बावजूद भाजपा ने पिछले चुनाव की तुलना में अपने वोट बढ़ाए हैं। हकीकत यह भी है कि हिमाचल प्रदेश और एम.सी.डी. में सरकार जितनी निकम्मी थी, भाजपा की चुनावी हार उसकी तुलना में हल्की है। मतलब यह कि भाजपा का चुनावी दबदबा अभी कायम है।

प्रधानमंत्री की वाकपटुता, गोदी मीडिया की मेहरबानी और भाजपा के प्रचारतंत्र के चलते जनमानस अब भी भाजपा की तरफ झुका है। भाजपा के पास इस जनमानस के झुकाव को चुनावी जनादेश में बदलने का तंत्र है। बेहिसाब पैसे, चतुर रणनीति और सांगठनिक चुस्ती की बदौलत भाजपा जनसमर्थन से भी कुछ

ज्यादा बेहतर चुनाव परिणाम निकालने की क्षमता रखती है। लेकिन हिमाचल और दिल्ली का परिणाम इस क्षमता की सीमाएं भी दर्शाता है। सरकारी, संघ परिवारी और दरबारी प्रचार तंत्र के असर के बावजूद अगर सरकार ठीक काम न करे तो लोगों की नजर में आता है, उन्हें यह चुभता है और सरकार विरोधी जनमानस बनता है।

गुजरात में आम आदमी पार्टी के आने से विपक्ष के वोट ही नहीं उसका मनोबल भी टूट गया। जबकि हिमाचल और दिल्ली में भाजपा को एक स्पष्ट प्रतिद्वंदी का सामना करना पड़ा। इन दोनों राज्यों में विपक्षी पार्टियों के पास कोई एक चेहरा नहीं था, लेकिन उन्होंने चुनाव को स्थानीय मुद्दों पर लड़ा। सबसे बड़ी बात है कि विपक्षियों ने चुनाव जमकर लड़ा और चुनावी मैदान में डटे रहने की हिम्मत दिखाई। गुजरात में कांग्रेस ने यह हिम्मत नहीं दिखाई। इतिहास गवाह है कि जब-जब तृणमूल कांग्रेस जैसी किसी पार्टी या किसान मोर्चा जैसे किसी आंदोलन ने जमकर लोहा लिया है तब-तब भाजपा और मोदी सरकार को घुटने टेकने पड़े हैं।

इस आधार पर 2024 में सत्तापलट का संकल्प रखने वाली राजनीति के लिए चार सबक हैं। पहला, भाजपा की सबसे बड़ी

शक्ति जनमानस का उसकी ओर झुकाव है। भाजपा का प्रचार तंत्र प्रधानमंत्री के महिमामंडन, सरकार के काम का गाजा बजाने, पार्टी की सच्चाई पर पर्दा डालने और जनता का ध्यान जमीनी समस्याओं से भटकाने में अब भी काफी हद तक सफल है। अगर एक बार इस झूठ के गुब्बारे को पंक्चर कर दिया जाए तो भाजपा को बराबरी के धरातल पर आकर चुनावी मुकाबला करना पड़ेगा। इसलिए जनता से, जनता की भाषा में, जनता के मुद्दों पर सीधा संवाद करना विपक्ष की पहली प्राथमिकता होनी चाहिए। कांग्रेस द्वारा आयोजित और देशभर के जन आंदोलनों द्वारा समर्थित 'भारत जोड़ो यात्रा' इस दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। इस यात्रा के माध्यम से महंगाई, बेरोजगारी और अमीरों की बढ़ती अमीरी जैसे मुद्दे जनता के सामने रखे जा रहे हैं।

अभी झूठ का गुब्बारा फूटा तो नहीं है, लेकिन उसमें छेद होता दिखाई दे रहा है। इस शुरूआत को गहन सघन संवाद के जरिए आगे बढ़ाना होगा। इस उद्देश्य के लिए देश में भाजपा के आई.टी. सैल का मुकाबला कर सकने वाली एक मशीन को खड़ा करना होगा जो सोशल मीडिया के माध्यम से जनता तक सच पहुंचा सके। दूसरा काम है प्रतिपक्ष की ऊर्जा को इकट्ठा करना। आज भी भाजपा को देश के 60 प्रतिशत से अधिक मतदाताओं का

समर्थन प्राप्त नहीं है। आज भी जन आंदोलनों की बहुत बड़ी ऊर्जा नफरत और झूठ की राजनीति का मुकाबला करने के लिए उपलब्ध है। इसलिए जरूरत है इस ऊर्जा को संजोने की। इसका मतलब विपक्षी दलों का महागठबंधन नहीं है। देश के कुछ राज्यों को छोड़कर विपक्षी दलों की एकता न तो संभव है न ही आवश्यक है।

तीसरा कदम होगा चुनाव के लिए हर स्तर पर योजना और उस योजना का क्रियान्वयन। जबसे प्रशांत किशोर सरीखे चुनावी मैनेजर और विशेषज्ञों का आगमन हुआ है, उसके बाद से चुनाव लडऩे की विधा पूरी तरह बदल गई है। अब पुराने तरीके से चुनाव लडऩा और जीतना संभव नहीं है। चौथा और अंतिम सबक सीधा सादा है। चुनाव जीतना है तो जमकर लडऩा होगा। ड्राइंग रूम की बजाय सड़क की राजनीति करनी होगी। दिन-रात जनता के बीच में रहना होगा, 24 घंटे राजनीति करनी होगी, अपनी सुख सुविधा का त्याग करना होगा, बड़ी लड़ाई का माद्दा दिखाना होगा।